श्रीमद्भगवद्गीता.



आशाभाई लल्लुभाई बिलिया.

गौतमी विद्योत्तेजक लेखमाला मणि २.

श्रीमद्भगवद्गीता.

सुधारा वधारा साथे

आवृत्ति पांचमी.

गीति.

प्रारब्धो भोगवतो तोपण गीता नित्य पाठ करशे,
मुक्त सुखी ते जाणो कार्यकरे पण नहिज लेपाशे.

महात्मा श्रीभट्ट रामभक्तनी

गीताने आधारे.

योजक.

गौतमी.

प्रसिद्ध कर्ता.

आशाभाई लखुभाई बिलिया.

संवत् १९६८-६९ सन १९१२.

अर्पण पत्रिका.



सन्मानपात्र बन्धुओ !

वांचवानी अभिरुचि, सत्कार्य तरफ प्रवृति, धननो सदुपयोग करवानी इच्छा अने देशबान्धवोना आचार विचारनी सुधारणा थवाना यत्न तरफ आप महाशयोनी रूडी लागणी छे, एवुं मानीने तेना शुभ स्मरणार्थे मानपूर्वक आ पुस्तक आपने अर्पण करी आनंद पामुं छुं.

आपनो.

आशाभाई.

प्रस्तावना.



"श्रीमद्भगवद्गीता" केवो अपूर्व अने सर्वमान्य ग्रन्थछे, ते सर्व कोईना जाणवामां छे, दरेक वर्णना अने दरेक धर्मना लोको तेने परम पूज्य गणीने वंदेछे. एमां एवो तो सर्वोत्तम बोध समायलो छे के ते वांचवाथी मनुष्यनुं आ लोकमां कल्याण अने परलोकमां सद्गति थायछे. एनावडे व्यवहारिक अने पारमार्थिक बन्ने रीतिये मनुष्यनो उद्धार थायछे एमां एवुं तो तत्वज्ञान छे के एनावडे जीवननी सफलता अने आत्मानी उन्नति थायछे, एनी योग्यतानुं पूरेपूरुं वर्णन करवाने मनुष्यनी वाणी समर्थ नथी. केवळ अर्जुननेज

બોધ આપવા માટે નહિ; પણ સકળ સૃષ્ટિના ઉદ્ધાર માટે પરમાત્મા શ્રીકૃષ્ણ ભગવાને આ ગીતારૂપ મનુષ્યોને એક પ્રસાદી આપેલી છે.

ટુંકામાં શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતા એક જ્ઞાનનો અમુલ્ય ભંડાર છે, મોક્ષ પામવાનો રસ્તો તેમાં સ્પષ્ટ અને સુન્દર રીતે બતાવવામાં આવેલ છે, તેમાં વર્ણવેલા કર્મયોગ, ભક્તિયોગ અને જ્ઞાનયોગ જોઈ અન્ય- દેશના ઉત્તમ વિદ્વાનો પણ વિસ્મયતાને પામ્યા છે. એવા એક પવિત્ર ગ્રંથને માટે લાંબી પ્રસ્તાવનાની જરુર નથી, છતાં પુસ્તક પ્રકટ કરવાના હેતુ દર્શક બે બોલ ઉચરવાની આવશ્યકતા વિચારી છે. અને તે એ છે કે, આ પવિત્ર અને અમુલ્ય ગ્રંથ અસલથી માતૃભાષા—(સંસ્કૃત) માં હોવાથી આપણા લોકો તે તત્ત્વો સમજવામાં પછાત છે.

समय अनुकुळ थवाथी आजे तेनां घणीखरी भाषाओमां भाषान्तर थएल छे, तोपण आ पुस्तक अमे इच्छीए छीए के । श्रीकृष्णभगवाने धनुष्यधारी अर्जुनने बतावेल कर्तव्यपरायणता, श्रद्धा, भक्ति, ज्ञान, योग, इत्यादि विषयोमां दरेकने दरेक रीते कंईने कंई वधु रसिक अने उपयोगी थाय. एनेज माटे आवुं उत्तम पुस्तक छतां मात्र परोपकारनी दृष्टिथी जुज किंमते आपवानु अमे साहस कर्युं छे. ते साहसने दरेक गृहस्थ तरफथी योग्य उत्तेजन मळशेज.

अक्षय तृतीया.संवत् १९६८. डीलाइल रोड पो.नं.११ (मुंबई.)	}	**योजक.** गौतमी.



॥ अथ श्रीभगवद्गीता प्रारंभ ॥



॥ श्री गोपीजन वल्लभायनमः ॥ श्री गुरुभ्योनमः ॥ दुहो ॥ आद्य श्री गुरुने नमुं, वळी आद्य पुरुषनुं ध्यान; भगवद्गीता बोलशुं, केवळ ब्रह्मज्ञान ॥ १ ॥ अर्जुन केरे कारणे, जगत तणे उपदेश; कर्ममां हानी कर्म कहुं, तेनुं हारद लेश ॥ २ ॥ उपनीषदनो अर्थछे योग शास्त्रनुं ज्ञान; अष्टादश अध्या लगी, बोल्या श्री भगवान ॥ ३ ॥ कर्ममां हानी कर्म कहुं, ते उपर दृष्टांत; हंस तजे जेम नीरने, पयनो आणे अंत ॥ ४ ॥ निवृत्त मार्ग ग्रंथछे, वे माटे संकेत; युद्ध भाग थोडो कही, कहींशुं

कथा समेत ॥ ५ ॥ पूर्वजन्मा पुण्ये करी, शिक्षण मळीयुं सार; मोति हंसमाटे रच्युं, दयालु जगदाधार॥ ६ ॥ ॥ चोपाइ ॥ हस्तिनापुर आव्या वेदव्यास, राय धृतराष्ट्र केरे-अवास; राए पूजा कीधी घणी, पुछी वात संग्रामज तणी ॥ ७ ॥ धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र सही, महा युध ज्यां करशे रही; अढारक्षोणी सेन्या मळी, अर्जुन सरखा बाणावळी ॥८॥ स्वामी ते युध केम पेखीए, इच्छा छे पण नहि देखीए; व्यास कहे राजा ए धार, देवचक्षु तने आपुं सार ॥ ९ ॥ अहीं थकी ते सहु देखशो, कौरव पांडव युद्ध पेखशो; स्वामी जन्म लगी हुं अंधज रह्यो, घणो काळ मारो तो गयो ॥ १० ॥ हवे पुत्र

मृत्यु जोवाने काज, देवचक्षु शुं मागुं महा-
राज ? पछी व्यासशिष्य संजय छे जेह,आपी
नेत्र बेसाड्या तेह ॥ ११ ॥ कुरुक्षेत्रमां कांई
थशे, ते संजय बेठो अहीं बोलशे; एवुं
कहीने व्यासजी गया, संजय प्रत्ये राय
बोलिया ॥ १२ ॥ कहो संजय हवडां शुं
थाय, कोण कोण मळीआ छे राय; संजय
कहे राजा ए धार, हवडां दुर्योधन करे वि-
चार ॥ १३ ॥ द्रोणाचार्यने वाणी कही,
पांडव सेना मळीछे सही; जुओ कोण
कोण आव्या एह, आचारज निरखी ल्यो
तेह ॥ १४ ॥ द्रुपदपुत्र त्हारो शिष्य
जेह, भीम अर्जुन सरखोछे तेह, वळी वै-
राट द्रुपद युयुधान, धृष्टकेतु नें चेकितान

॥ १५ ॥ काशिराजा पुरंजित जेह, कुंति भोजसो बळियो तेह; अर्जुन सुत बळिओ अभिमन्य, एवुंछे पांडवनुं सैन्य ॥ १६ ॥ हवे आपणुं कहुं ते जाण त्रिलोक संहारण म्हारुं बाण; भीष्म करण कृपाचार्य जेह, अश्वत्थामा विकर्ण तेह ॥ १७ ॥ सोमदत्त शल्य महारथी, एमां भीष्मछे सेनापति; एवुं सुणी दुर्योधन गयो, सेनामां जइ उभो रह्यो ॥ १८ ॥ शंखनाद सेना बे करे, संजय धृतराष्ट्र प्रत्ये ओचरे; त्यां अर्जुन कवच थयुं शतखंड, शूरवीर वाध्या ब्रह्मांड ॥ १९ ॥ अर्जुन कहे सांभळो भगवान, बेउ सेनानुं मध्य प्रमाण; त्यां रथ आपणो मेली करी, जुओ कोण

आव्याछे तहीं ॥ २० ॥ अर्जुन वचन श्रीकृष्ण सांभळी, हांक्यो रथ ज्यां सेना मळी; भीष्म द्रोण दीठा तेणे स्थान, पित पितामह तेह समान ॥ २१ ॥ पुत्र पौत्र सखाने वीर, स्वजन कुटुंब देखी थयो भीर; अर्जुन कहे सांभळो जदुराय स्वामी मंतो युद्ध नव थाय ॥ २२ ॥ शरीर माहरुं गळीने जाय, कंपे देह ने नहि रहेवाय; मुख सुके रोमांचित थाय, अर्जुन त्यहां दिङ्मुढज रह्यो ॥ ॥ २३ ॥ गात्र गळयां गति भंगज थयो, गांडिव धनुष नांखीने रह्यो; अर्जुन कहे धिक् धिक् ए राज, एनुं मार नथी प्रभु काज ॥ २४ ॥ स्वामी कुळनो क्षय केम

थाय, ए पातक शिर केम धराय; ते माटे हुं युद्ध न करुं, कथापि हुं एकलो जइ मरुं ॥ २५ ॥ नाखी धनुषने कायर थयो, अर्जुन त्यां मुर्छागत थयोः भीख मागीने भोजन करुं, पण ए राजने नहि अनुसरूं ॥२६॥ कुळनो क्षय करे नर जेह, घोर नर्कमां पडे जन तेह; योगशास्त्रने ब्रह्मविद्याय, पुरण थयो प्रथमो अध्याय ॥ ॥ २७ ॥ इति श्रीभगवद्गीता सूप ०सु० योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादेअर्जुनविषाद योगोनाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

॥ चोपाइ ॥ संजय धृतराष्ट्रने कहे, अर्जुन शोक सागरमां वहे; श्रीकृष्ण कहे अर्जुन शुं थयुं, कोण पाप त्हारे आवी रह्युं ॥ १ ॥ नरक पमाडे करे उपहास,

लोक हसारतनो ए वास; छांडी मोह धै-
र्य मन धरो, पारथ युद्ध तो शीघ्रे करो
॥ २ ॥ अर्जुन कहे सांभळो भगवान;
भीष्म द्रोण ते पिता समान; गुरुने का-
ज राज लेवाय, ते गुरुनो वध केम
थाय ॥ ३ ॥ चोपाइ ॥ कृष्ण कहे ए
जुठो वाद, सांभळ अर्जुन कथा अनाद्य;
आद्य पक्ष जे ब्रह्मज्ञान, ते जोतां छे सहु
समान ॥ ४ ॥ कोण गुरु शिष्य मात ने
तात, कोण पुत्र स्त्री कुटुंब भ्रात; जन्म मर्ण
आत्माने नथी, व्यापकने शुं कहीए कथी
॥ ५ ॥ ऋतु पुंठे ऋतु आवे जाय,
उदय अस्त जेम सुरज थाय; अखंड
बीज ज्योति छे जेह, व्यापक रूप भणीजे

तेह ॥ ६ ॥ श्रीकृष्ण कहे.को मरतुं नथी, तुं आत्मज्ञाने जोने कथी; जेम तृण अवस्था आवे देह, परमेश्वरनी इच्छा तेह ॥ ॥ ७ ॥ वळी जळमां परपोटा थाय, ते भागेने मांह्य समाय; आत्माराम भणीजे जेह, हरख शोकथी अळगो तेह ॥ ८ ॥ सहजे उपजे सहजे समे, अस्थिर माया एणीपेरे रमे; हुं म्हारुं करता नर जेह, पारथ मायानुं बळ एह ॥ ९ ॥ दुहो ॥ अनंत घट पाणी भर्या, एक चंद्रबिंब आकाश; घटमां प्रतिबिंब भासिये, तेम हरि सर्व निवास ॥ १० ॥ घट भाग्यो पाणी ढळ्युं, जे ज्यां ते त्यां जाय; चंद्र निरंतर एगळ्यो तेने दुःख न थाय ॥ ११ ॥

॥ चौपाइ ॥ निर्विकार अविनाशी सही, वाणी ग्रहेवा समर्थ नहि; अगम अगोचर बुध नव धरे, तेनी चिंता तुं शीद करे ॥ ॥१२॥ वायु न शोषे आगे नव बळे, जळे बुडे के गगन नव गळे; शस्त्र न भेदे अमर थी न मरे, तेनी चिंता तुं शीद करे॥ १३॥ हे अर्जुन एवुं तुं जाण, निर्भयपणुं तुं रू-दिये आण; क्षत्रीने नहि लागे पाप, स्वर्ग पमाडे टाळे ताप ॥ १४ ॥ स्वर्गद्वार उ-घाडुं थयुं, समस्त योद्धनुं पातक गयुं; भा-ग्य विना ए नहि पामिये, कलिमल दोष सहु वामिये ॥ १५ ॥ रणसंग्रामे क्षत्री मरे, तेतो स्वधर्म थकी उद्धरे; माठे एमां पाप न होय, अर्जुन सत्य करी मान्जे

सोय ॥ १६ ॥ ॥ दुहो. ॥ सुभट सर्वे एम बोलशे, जे भय पाम्यो अर्जुन; लोकोमां अपजश थशे, जे हार्या कुंतातंन ॥ १७ ॥ यश अपयश जोता नथी, सुख-दुख बेहु भर्म; जय पराजय तो नहि, नहि हानी लाभ ने कर्म ॥ १८ ॥ चोपाइ ॥ घर मांहे सुता नर जेह, कदिये मोक्ष न पामे तेह; ॥ अर्जुन उवाच ॥ स्वामी वेद विहित जे धर्म, स्वधर्म दान जप तप ए कर्म ॥ १९ ॥ मुक्ति लेहेछे वेद विचार, स्वामी ते मांहे शुं निरधार; ते मने सत्य कहोने हरि, एक वात निरधारज करी ॥ ॥ २० ॥ तेमां अंतर्यामि छो जेह, म्हारुं मन भमेछे तेह, ॥ श्री भगवानुवाच ॥ अ-

र्जुन तुं कहेछे ते सत्य, वेदतणी छे द्वि-
विधि मत्य ॥ २१ ॥ त्रीगुणातित बुद्धि तुं
आण. कर्ममांह्य निष्कर्म तुं जाण; ज्ञानी
पुरुष जे कर्मने करे, जप तप याग तिर्थ
आचरे ॥ २२ ॥ स्वधर्म माटे करवुं एह,
फलनी इच्छा न करे तेह; उदास थइ मन
राखे जेम, ते कर्म मांहे जाणो निष्क-
र्म ॥ २३ ॥ ज्ञान योगथी मन वश थाय,
ज्ञान विना ते नव ग्रीछाय; हर्ष शोक
आयुष्य ने हाण,पाप पुण्यंथी अळगो जाण
॥ २४ ॥ ते सहजे मोहसागर तरे,
मोह लक्षणनी भ्रमणा हरे; ॥ अर्जुन
उवाच ॥ (कहो) स्वामी स्थिर बुद्धि
केम थाय, मोहसागरने केम तरांय ॥२५॥

॥ श्री भगवानुवाच ॥ ॥ मन विषेथी सघळुं छांडिए, अर्जुन उदास थइ चालिए; मने करी मननुं शोधंन, थाय स्थिर बुद्धि पावंन ॥ २६ ॥

॥ दुहो ॥ दुःख आवे मन शोक नहि; सुखनो मद नहि थाय; राग द्वेष मनथी तजे, तो मोह मनथी जाय ॥ २७ ॥ ए लक्षण स्थिर बुद्धि तणां, मन जित्ये जिताय; इंद्रिने संकोचिए, जेम कुर्म संकोचे काय ॥ २८ ॥ चोपाई ॥ विषय निवृत्त ज्यारे मन थाय, अहार तजे तो सहु तजाय; रसना सकलने त्यागे सोय, ते हरि पामे संशय न कोय ॥ २९ ॥ तोपछी विषय ध्रास क्यम थाय, अहार जिताए सहु जिताय;

रसना इंद्रि रसने नहि तजे, त्यां लगी मन विषयोने भजे ॥ ३० ॥ ज्यां लगी संबंध ग्रहनो उपजे, संगथकी कामक्रोध निपजे; क्रोध मोह उपजे अभिमान, अभिमाने उपजे अज्ञान ॥ ३१ ॥ अज्ञाने बुद्धिनो नाश, बुद्धि नाशे नर्क निवास; माटे इंद्रियो जितवी, बुद्धि ज्ञाने वश राखवी ॥ ३६ ॥ स्वधर्मनो करवो वेपार, हुं माहारुं तजवो अहंकार; अर्जुन एनो एह उपाय, रस इंद्रि ज्ञाने जिताय ॥ ३३ ॥

॥ दुहो ॥ मोह निंद्रा संसारमां, जागे हरिना जन; योगी निरखे ध्यानमां, संसारिने सुपंन ॥ ३४ ॥ ॥ चोपाई ॥ माटे स्वधर्म पालवो सही, एमां संशयं करवो.

नहि ;योग शास्त्रने ब्रह्मविद्याय, सांख्य योग द्वीतियो अध्याय ॥ ३९ ॥ इति श्री भगवद्गीता सू० सु० योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनंसवादे सांख्ययोगो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ ॥

॥ चोपाई ॥ अर्जुन कहे सांभळो भगवान, द्विधा वचन बोलोछो जाण; क्षण मां प्रतिपादो कर्म, क्षणमां कहोछो व्यापक ब्रह्म ॥ १ ॥ माटे खरी वात निरधारज करी, एक्क मार्ग देखाडो हरि; श्रीकृष्ण कहे अर्जुन मन आण, बेहु मार्ग सरखा करी जाण ॥ २ ॥ उभय मळीने एकज थाय, ज्ञाने करीने तेह पीछाय; बेहु मळीने सरखा जाण, रात दिवस जेम सूर्य प्रमाण ॥ ३ ॥ कर्म मांह्य निष्कर्म छे तेम-

पाषाण काष्ट हुताशन जेम; गृहस्थाश्रम मूकी वन जाय, वस्त्र तजी सन्याशी थाय. ॥ ४ ॥ तेणे ब्रह्म न पामे सही, तत्व ज्ञान जो भासे नहि; ब्रह्म थकी उपन्युछे कर्म, सर्व भूतमां व्यापक ब्रह्म ॥ ५ ॥ (ते) कृष्णार्पण बुद्धे कीजिये, निर्गुण मांहे ते पुजिये- पूर्वे जनकादिक राजन्न, जेणे जाण्युं तुं ब्रह्मज्ञान ॥ ६ ॥ तेणे कर्म कृष्णार्पण कर्यां, कर्म तेमणे नव विसर्यां; ते माटे कर्म आचरवां सही, कर्म लोप तो करवो नहि ॥ ७ ॥ अर्जुन प्रत्ये वदे भगवान, संसारमां मारे शुं मान, लेवुं देवुं म्हारे नथी, सौथी वेगळो जोनी कथी ॥ ८ ॥ तथापि हुं करुंछुं कर्म, शामाटे (जे) लोकोना धर्म;

जो हुं कर्मने नंदु वेद, तो वर्णाश्रमनो भागे भेद ॥ ९ ॥ कर्म मोह निष्कर्म जाणशे, पद म्हारुं निश्चे पामशे; जेना धर्म होय ते करे, बीजा धर्मने नहि अनुसरे ॥ ॥ १० ॥ अर्जुन उवाच ॥ कोनुं प्रेर्युं मन कर्मज करे, कोनुं प्रेर्युं मन पाप आचरे; श्री भगवानुवाच ॥ अर्जुन रजोगुण उपन्यो जे वार, ज्ञान वन्ही ढांक्यो निरधार॥ ११॥ ते उपर राखीने मंन, करता कर्म पण नहि लेपंन; मॅले दर्पण झांखुं (होय) जेम, काम क्रोध शत्रु छे तेम ॥ १२ ॥ ज्ञान नव टके तेनुं जेह, एम निर्दय थयो छे तेह; पछी वळुं उपजे अज्ञान, अज्ञाने आवे अभिमान ॥ १३ ॥ मन बुद्धि इंद्रिना ठाम, त्यां

रही दुष्ट करावे काम; ते माटे इंद्रिवश करो, रजोगुणने राखो परो ॥ १४ ॥ हे अर्जुन छे एज उपाय,आत्मज्ञाने आत्मा वश थाय; विषय वासना करो वेगळी, कामक्रोधने नाखो दळी ॥ १५ ॥ मन जिते जित्यो संसार, अर्जुन एवुं ज्ञान विचार; योगशास्त्रने ब्रह्मविद्याय, कर्म प्रसंशा तृतीयो अध्याय ॥ १६ ॥

॥ इति श्रीभगवद्गीतासू० ,सु० श्रीकृष्णाअर्जुन संवादे कर्म प्रसंशा नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

॥ चोपाइ ॥ अर्जुन में तने जे जे कह्युं, ते पुर्वे हुंथी सूर्ये ग्रह्युंः सुरज थकी तो मनुए लह्युं, मनुए इक्ष्वाकुने कह्युं

॥ १ ॥ इक्ष्वाकुथी अमरिष जेह, त्रिभुवन यश वधार्यो तेह; अमरीष योग ज्ञानमां रह्यो, राज थको मुजने पामीयो ॥ २ ॥ परम भक्त तुं म्हारो दास, तुजने संभळाव्यो अभ्यास; अर्जुन कहे स्वामी विनति, सूर्यतणी तो आद्य उत्पति ॥ ३ ॥ जन्म तमारो हवडां लह्यो; सूर्य केइ पेरे कह्यो; कृष्ण कहे हुं शुं कहुं कथी; म्हारा जन्मनी गणना नथी ॥ ४ ॥ ते गतिने शुं जाणे कथी, हुंथी ब्रह्मानी उत्पति; म्हारी मायानो नहि पार, निमाईक माया अवतार ॥ ५ ॥ प्रकृतिभेद पुष्टज थाय, वेदधर्म ज्यारे लोपाय; म्हारा भक्त जो दुखिया थाय, ते दुख मुजथी नव सहेवाय

॥ ૬ ॥ સાધુતણી રક્ષાને કાજ, લઉં અ-
વતાર દુષ્ટ કરવા તાજ. અર્જુન એવું જ્ઞાન
વિચાર, હું છું કર્મ રહિત નિરધાર ॥ ૭ ॥
મોક્ષ પદારથ તે પામશે, રાગ દ્વેષ જ્યારે
વામશે; મોહ મત્સર છાંડીને સજે, સદા
મ્હારો થઇ મુજને ભજે ॥ ૮ ॥ તેને મુક્તિ
નથી વેગળી, જેની મનસા મુજમાં ભળી, જે
જે જેવી બુદ્ધિમાં ભળે, તેને તેવી સિદ્ધિ
મળે ॥ ૯ ॥ અર્જુન એમ તે જાણો સહી
મુને કર્મનો લેપજ નહિ; એવી બુદ્ધિ જે
જાણશે, કર્મ છુટી મહા સુખ માણશે ॥૧૦॥
પુર્વે જ્ઞાની થયા નર જેહ, કર્મ કરંતા
છુટ્યા તેહ; અર્જુન કહે સ્વામી વિનતિ,
કર્મ અકર્મ તણી કોણ ગતિ ॥ ૧૧ ॥

अर्जुन एवुं तुं विचार, कर्म अकर्म विकर्म वेपार; कर्ममां निष्कर्म देखे जेह, अकर्म लक्षण कहीये तेह ॥ १२ ॥ वळी कर्ममां कर्म लेपाय, विकर्म कर्म ते त्यां कहेवाय, दान पुण्य इत्यादिक जेह, निष्कर्म करे ब्रह्मवेत्ता तेह ॥ १३ ॥ गृहने विषे रही नर जेह, यथा लाभ संतोषे तेह; दुष्ट संगथी अळगो थाय, काम क्रोधथी नव लेपाय ॥ १४ ॥ ब्रह्मबुद्धि अनुभवे जेह, ए ब्रह्म लक्षण कहीए तेह. ते तो शुद्ध ज्ञानी कहेवाय, मन बुद्धि जेने वश थाय॥१५॥ अर्जुन प्रत्ये वदे भगवान्, तने कह्युं में तत्वज्ञान; पावक पवननो प्रेयों पळे, कोटानकोटि जंतु परजळे॥१६॥

अर्जुन ए दृष्टांत कहेवाय, पावक पापे नहि लेपाय; कोटि योजन बळे नव खंड, पाप न लेपे तेने पिंड ॥ १७ ॥ सर्व शोष करे हुताशन, पाप न लागे ब्रह्मज्ञान; एवुं ज्ञान विचारे मन, तेने पाप न लेपे अर्जुन ॥ १८ ॥ ज्ञान लक्षण वहनीछे जेह, काम क्रोधने बाले तेह; ज्ञान सरखुं कांइ पावन नथी, जोजे वेदपुराणे कथी ॥ १९ ॥ ज्ञान तणो मोटो महीमाय, चौद लोक जेमां वश थाय; आत्म विषे आत्मा देखिये, श्रद्धा पूर्वक जो पेखिये॥२०॥ ज्ञान दीपक जाणो सार, सहु तम भागे तेणीवार; योग ज्ञान बाले छे कर्म, संशय छुटे भागे भरम ॥ २१ ॥ हे अर्जुन कहुं

हृदे विचार, अज्ञाने उपजे अहंकार; अहंकारे मोह मन भेदीए, ज्ञान खडगे ते छेदीए ॥ २२ ॥ योग युक्तिथी कर्म विचार, कर्म अकर्म तणो प्रतिहार; योगशास्त्रने ब्रह्मविद्याय; कर्म योग चतुर्थोध्याय ॥२३ ॥ इति श्रीभगवद्गीता सूपनिनिशद् सु० श्रीकृष्णाअर्जुनसंवादे कर्मयोगो नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

॥ चोपाई ॥ अर्जुन कर्म तणो जे नाश, वली योग क्षमा अभ्यास; बेहु मार्ग सरखा करी जाण. त्यां अनुभव पद होय निरवाण ॥ १ ॥ कोनो द्वेष इर्षा नव करे, अद्वैत बुद्धिए आचरे; हे अर्जुन ते भक्त प्रमाण, जेणे जाण्युं तत्वज्ञान ॥ २ ॥

जोतां सांभळतां ते सही, सुगंध लेतां जमतो अही; सूतो बेठोने चालतो, श्वास लेतो ने विलसतो ॥ ३ ॥ मनमां सार असारज सही, हुं करता एम जाणे नहि; चलण वलण (जे) कांइ विचार, ने इंद्रियनो वर्ते पार ॥ ४ ॥ जेम जलमां कमल उदास, तेम ज्ञानीने कर्म निराश; योगेश्वर महानंत छे जेह, कामना कर्म करेछे तेह ॥ ५ ॥ ते आत्मानी शुद्धि काज, करे ते पण फळनो त्याग; अर्जुन जे कहीए महानंत, तथापि मोह छांडे भ्रांत ॥ ६ ॥ मोह अज्ञाने ढांक्युं ज्ञान, ज्यम वादले ढांक्यो भाण; तेने आनागमननी भ्रमणा नहि, जे कर्म ब्रह्मने अर्पे सही,

॥ ७ ॥ हुं कर्ता एम जाणे नहि, अद्वैत ब्रह्म निरंतर सही; अर्जुन ते योगी करी जाण, ब्रह्मपद पामे ते निर्वाण ॥ ८ ॥ पुर्वे वशीष्ठादिक ऋषि जेह,वेद विहित कर्म करता तेह; ज्ञान द्रष्ट आभ्यंतर मर्म, वेद विहित करता कर्म ॥९॥ चित्र घणां जेम पटमां होय, तेम आत्माने देखे सोय; घणां चित्र पण पट तो एक, ज्ञानी जननो एज विवेक ॥ १० ॥ आत्मा जित एवा ऋषि जेह, शरण ब्रह्मपद पाम्या तेह;एकज आत्मा जिते जेह, निश्चे हरिपद पामे तेह- ॥ ११ ॥ योगशास्त्रने ब्रह्मविद्याय, कर्म नाश पंचमो अध्याय ॥ १२ ॥ इति श्री भगवद्गीता सू० सु० श्रीकृष्णार्जुनसंवादे

सन्यासयोगो नाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

॥ चोपाइ ॥ अर्जुन वेद विहित जे कर्म वाद करे ने लोपे धर्म; नहि संन्यासी नहि ते यति, नहि होय तेने उत्तम गति ॥ ॥ १ ॥ योग पामवा इछे मर्म, वेद अंग ते कारण कर्म; योगथी मोक्ष इच्छे जेह, क्षमा खडग ले कारण तेह ॥ २ ॥ एवो ज्ञानी तेह संन्यास, इंद्रियजित संसार उदास; तेने शत्रु मित्र समान, सूवर्ण काष्ट लोह पाषाण ॥ ३ ॥ एवा योगी होए जे पाप पुन्यथी अळगा तेह; पवित्रपणे आसन द्रढ करे, सभ्य असभ्य द्रष्टि नव करे ॥ ४ ॥ मन चंचळने निश्चे करी, हृदय प्रकाशनी मांहे हरि; ज्ञानदृष्टी अविलोके,

जेह, ब्रह्मभूत नर जाणीए तेह ॥ ५ ॥
अति अहार निद्रा जेहने, ध्यान धैर्य नव
लागे तेहने; अल्प अहार लघु निद्रा जेह
आसन ध्यान जगत रहे तेह ॥ ६ ॥ एवा
ज्ञानी होय नर जेह, मोक्ष मार्गने पामे
तेह; कांइ इच्छा मनमां नव करे, ज्ञानी
शुद्ध कर्म आचरे ॥ ७ ॥ मन ते आत्माने
वश करे, बीजुं कांइ मन नव धरे; मन
चंचळछे माटे वळी, ज्यांहां त्यांथी जा-
यछे चळी ॥ ८ ॥ त्यां मन बुद्धि आक-
र्षण करी, हरि अर्चन करतां रहेशे ठरी;
पछी मुने सघळे देखशे, सर्व भुत व्यापक
पेखशे ॥ ९ ॥ सर्वे आत्मा जाणे समान,
अभेद बुद्धि एवुं ज्ञान; चंचल मन साच-

ववुं ग्रही, मन जिते हरि पामीए सही ॥
॥ १० ॥ ते माटे मन जिते जेह,मन जिते
हरि पामे तेह;मन थकी मने तेवो लेखशे,
हृदयकमळमां प्रभु पेखशे ॥ ११ ॥ दुहा
॥ अर्जुन उवाच ॥ स्वामी ते साचुं कह्युं,
जे निग्रह काजे मन; चंचळ मन क्यम
जितीए, क्यम बांध्यो रहे पवन ॥ १२ ॥
इंद्रि सघळी क्यम स्थीर रहे, अद्रढ गति
बलवान् ; तेनो निग्रह क्यम कीजीए,
सांभळो श्रीभगवान ॥ १३ ॥ ॥ श्री-
भगवान उवाच ॥ चोपाइ ॥ अर्जुन
तुं कहेछे ते सत्य, मन तणीछे चं-
चल गत्य; ते माटे करवो अभ्यांस, वैराग्य
योग भक्ति ज्ञान प्रकाश ॥ १४ ॥ वैरागे

करी मन जितिये, मन जिते योगी की-
जीये; स्वामीको संन्यासी थाय, ग्रहस्था-
श्रम मुकी वन जाय ॥ १२ ॥ कदी यो-
गथी चळे नर जेह, कोण गति प्रभु पामे
तेह, हे अर्जुन एम कहे श्रीहरि, योगथी
जेनी मनसा फरी ॥ १६ ॥ काम क-
र्मनो कीधो त्याग, ते पुन्ये पामवो वैराग;
(को) काले तेने ज्ञान उपजे, ज्ञानथकी ते
मुजने भजे ॥ १७ ॥ दुर्गति तेने होयज
नहि, जेणे माहारी भक्ति लही; योगशा-
स्त्रने ब्रह्मविद्याय, वेद कर्म षष्ठो अध्याय
॥१८॥इती श्रीभगवद्गीतासू०सु०श्रीकृष्णा-
र्जुनसंवादें वेदकर्मनाम षष्ठोऽध्यायः ॥६॥
॥ चोपाइ ॥ हे अर्जुन ते जिवन

मुक्त, मारे विषे मन राखे आसक्त; उन-
मुनि द्रष्टे योगाभ्यास, ए शास्त्रमां गण्या
निजदास ॥ १ ॥ ए विना बीजा एकठा
मळे, म्हारी गतिने ते नव कळे, अवनि
उदक वन्हीने वाय,आकाश मन बुद्ध एकज
थाय ॥२॥ अहंकार मळिया ते जाण, अष्ट
प्रकृति जिव प्रमाण;ए प्रकृति भेदे जग उत्पन्न
तेमां अधिकारी छे मन्न॥३॥ए सघळुं जग
हुंथी थाय,लय पामी मुजमां समाय;हुंथी जग
अळगुं न लगार, एक सुत्रे जेम प्रोव्यो
हार ॥ ४ ॥ जगरुपी आ मणका करी,
एक सुत्रे ते प्रोव्या हरि; उदक विषेनो र-
स छे जेह, चंद्र सूर्य कांति तेहं ॥ ५ ॥
प्राण विषे वर्ते ॐकार, ते मांहे हुंछुं नि-

रधार; आकाश विषे शब्द छे जेह, मनुष्यो-
मां पुरुषार्थ तेह ॥ ६ ॥ प्रथ्वी विषे सु-
गंधछे सही, वन्ही तेजथी अलगो नहि;
तपसीनुं तपछे ते सत्य,सर्व भूतमां बीजानी
गत्य ॥ ७ ॥ बुद्धिवंतनी बुद्धि जेह, तेज-
वंतनुं तेज हुं तेह; पारथ प्रति वदे भग-
वान, तुंथी हुं अलगो नहि जाण ॥ ८ ॥
त्रीगुण पुरुषने आज्ञा देइ, कर्म करावुं
अलगो रही;त्रीगुणातित मुजनेजाणशे, दुष्ट
संगथी अलगो थशे॥९॥ चतुरविध भक्तिछे,
जेह, श्रद्धाये आराधे तेह; एक आरतवंत
मुजने सेवतो, बीजो जाणवाने इच्छतो
॥ १० ॥ त्रीजो कामना बुद्धे थाय, चोथो
ते ज्ञानी कहेवाय;चारेमां ज्ञानी ते सार, ते

મુજને પામે નિરધાર॥૧૧॥જ્ઞાનીને હું વલ્લભ
જેહ,મારે વલ્લભ જ્ઞાની તેહ;મારા ભક્ત જે ધારે
કામ, તેવાં રુપ ધરું તે ઠામ ॥ ૧૨ ॥
વસ્તુગત્ય અરુપ કરી માન, જનમાંહે સ-
ગુણ કરી જાણ; મુજને સગુણે કરી જે
ધાય, તે મુળથકી મુર્ખ કહેવાય ॥ ૧૩ ॥
અગમ નિગમને વર્તમાન, મ્હારાં કર્મનો
કો નહિ જાણ; હું જાણું પણ તે નવ લહે,
મહિષી ભાર જેમ દૂધનો વહે ॥ ૧૪ ॥
મારું ભજન કરતાં અઘ જાય, મુજને ભ-
જતાં મુજમાં સમાય;યોગશાસ્ત્રને બ્રહ્મવિદ્યાય,
જ્ઞાનપ્રસંશા સપ્તમો અધ્યાય ॥૧૫॥ ઇતિ
શ્રીભગવદ્ગીતા સૂપનિષદ્સુ० શ્રીકૃષ્ણાર્જુન
સંવાદે જ્ઞાનપ્રસંશાયોગોનામ સપ્તમોઽધ્યાયઃ૭

॥ चोपाइ ॥ स्वामी आत्मा ब्रह्म कहेवाय, आदि दैवत कोने धाय; अधि दैवत मुक्तना धर्म, स्वामी संशय भागो भर्म ॥ ॥ १ ॥ अर्जुन प्राण अध्यासे धाय, अध्यात्म ब्रह्म ते कहेवाय; यज्ञ दान जप तपने कर्म, अध्यात्म भक्तना कहीए धर्म ॥२॥ ज्ञान योग करी मारुं ध्यान, अधि दैव ते कहीए ज्ञान; तेह सदा तुं सेवे सही, मारुं ध्यान करजे स्थीर रही ॥ ३ ॥ अर्जुन युद्ध करो जय थशे, अंते पद मारुं पामशे; अभ्यास योगे मन वश आण, मन आणे (पद) पामे निरवाण ॥ ४॥ मारुं पद ते अचळ प्रमाण, (बे) सहस्र युग दिन रात्री जाण; वर्ष सो एक ब्रह्मानां थाय, एणी

पेरे संख्या गणाय ॥ ५ ॥ सो वर्ष ब्रह्मा क्षय सही, मारा भक्तने पडवुं नहि; शुक्ल कृष्णपक्षो कहेवाय, उत्तर दक्षणायन नव थाय ॥ ६ ॥ अथवा काशी कइटक मर्ण, मारा भक्तने नहि अवतर्ण; ज्यां त्यां थको कदी देह मुकशे, अंते मारुं पद पामशे ॥ ७ ॥ यद्यपि श्वपच देह कदि थाय, तथापि दुरगति ना थाय; भक्त तणो मोटो महिमाय, मारा भजनथी संतो थाय ॥ ८ ॥ ते माटे मुज भक्ति करो, काम क्रोधने राखो परो; योगशास्त्रने ब्रह्मविद्याय, अष्टांग योग अष्टमो अध्याय ॥ ९ ॥

इति श्रीभगवद्गीता सूपनीषत्सु० श्रीकृष्णार्जुन संवादेअष्टांगयोगो नाम अष्टमो ऽध्यायः ॥ ८ ॥

॥ दुहो ॥ हे अर्जुन तुझने कहुं, गुढारथ ए ज्ञान; ए मारग जाण्या थकी, तरीए मोह अज्ञान ॥ १ ॥ ॥चोपाइ ॥ श्रधा विना कर्म जे करे, लोक मांह्य दंभक ते ठरे; जुठो वाद शास्त्रनो करे जेह, मारुं पद नव पामे तेह ॥ २॥ जेम आकाशमां वायु समाय, पण वायुमां आकाश न माय; स्यम सर्व भूतमां म्हारो वास, हुं सरवथी रहु उदास ॥ ३ ॥ योग ज्ञान जपतपे करी, श्रधाए पद पामे हरि; योगज्ञान फल श्रद्धा जेह, औषध मंत्र अग्निहोत्र तेह ॥ ४ ॥ जंग आचरण विधी जेह, अद्यापि में कहीछे तेह; सूर्य रुपे तपे छे जेह, कांति करण श्रव-

ण मां तेह ॥ ५ ॥ त्रिगुणातित बुद्धिए धाय, तेह तणो सांभल महिमाय ॥ ६ ॥ तामस बुद्धिए जे नर धाय, तेने पुण्ये दैतज थाय ॥ ७ ॥ सात्विक भावे भजे जे हरि, ब्रह्मलोक पामे तेणे करी; त्रिगुणातित भजे नर जेह, म्हारा पदने पामे तेह ॥ ॥ ८ ॥ पत्रपुष्प फल तोये जेह, म्हारो भक्त भावे अरपे तेह ॥ ९ ॥ ते हुं प्राशु भावे करी जाण, अभक्तने हुं त्याग नि-वारण; भक्त हिण (जे) देश परहरुं, भक्त तणी झुंपडिए ठरुं ॥ १० ॥ दुहो ॥ हे अर्जुन भावे करी, पत्र पुष्प फल तोय; श्रद्धाए जे अरपशे, माहारो भक्त जे सोय ॥ ११ ॥ ॥ चोपाई ॥ जे जन दाम

पुन्य आचरे, होमे मुखमां जप तप करे; ते मुजने अरपी अलगो थाय, पाप पुण्य ते नहि लेपाय ॥ १२ ॥ अधम थको जे मुजने धाय,एक नारी बीजो शुद्र कहेवाय; वली अनेक अधमजाति चांडाल, ते ह्मारु पद पामे तत्काल ॥ १३ ॥ ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यज सही, मुजने पामे त्यां संशे नहि; योग शास्त्रने ब्रह्मविद्याय, राज वरणव नवमो अध्याय ॥ १४ ॥ इति श्री मद्भगवद्गीता सूपनीषद्सु० श्रीकृष्णअर्जुनसंवादेराजवरणयोगोनाम नवमोऽध्यायः९

॥ चोपाइ ॥ हे अर्जुन एम मानो सहीं; देव ऋषि मुने जाणे नहि; ब्रह्मादिक आदे ऋषि जेह, माहारी गति नव जाणे

तेह ॥ १ ॥ अर्जुन कहे स्वामी ए विचार, म्होटा ते नव लाधे पार; तो छो सर्वने आदे सही, स्वामी कोण विभूति कही॥२॥ कृष्ण तमारी विभूति जेह, कोण विषे हुं जाणु तेह ? हे अर्जुन तुं सांभळ सहु, म्हारी विभूति तुजने कहुं ॥ ३ ॥ विश्वरूप थइ सृष्टिमां रहुं, योग विभूति तुजने कहुं; तेजमां रवि रुपे तेह, मरुतमां मरीचि जेह ॥ ४ ॥ नक्षत्रमां चंद्र ते हुंय, एम व्यापक रुपमां जाणे तुंय; देवमांहे इंद्रादिक राय, मूळ सिंचता द्रुम सिंचाय ॥ ५ ॥ रुद्रमां शंकरछे जेह, राक्षसमांहे विभीषण तेह; वसु मांहे पावक हुं जाण, पर्वतमां मेरु तुं जाण ॥ ६ ॥

पुरोहितमां गुरु ब्रहस्पति, स्वामी कार्तिक सेनापति; जळमां सागर हुं कहुं जेह, ऋषि मां भृगु कहीये तेह ॥ ७ ॥ अक्षर मांहे वर्ण अकार, यज्ञमांहे हय यज्ञ ते सार; स्थावर मांहे हिमाचल जेह, वृक्षमांहे अश्वत्थ कहीये तेह ॥ ८ ॥ देवऋषिमां नारद (ते) हुं, एम व्यापक करी जाणे तुं; ज्ञानी- मां कहीए शुकदेव, अश्वमधे उच्चैःश्रवा ऽश्वमेव ॥९॥ हस्तिमां ऐरावत जेह, नरा- धिपति नरमां तेह; आयुधमधे वज्र हुं जाण धेनूमधे कामदुघा प्रमाण ॥ १० ॥ बीज मांहे कंदर्पछे जेह, सर्पमांहे वासुकी तेह, नागमांहे शेष अवतार, जळपतिमधे वरुण विचार ॥ ११ ॥ पुर्वजमांहे अर्यमा जाण,

दैत्यमांहे प्रल्हाद प्रमाण; मृगमध्ये जाणो केसरी, पक्षीमधे गरुड ते हरि ॥ १२ ॥ श्रीरामचंद्र ते बाणावळी, तिर्थ मध्ये जाणो जान्हवि;विद्यामध्ये अध्यात्मक जेह, हुं करता हुं हरता तेह ॥ १३ ॥ स्त्रीयो- मध्ये सीता हुं सार, तेनो प्रथक् कह्यो विस्तार; कीर्ति लक्ष्मी सरस्वती जेह, स्मृ- ति क्षमा मेधा धृति तेह ॥ १४ ॥ व्रतमां हुं एकादशी नाम, •वेदमांहे गायत्री साम; बारमासमां मार्गशीर्ष जेह, षट् ऋ- तुमां हुं वसंत तेह ॥ १५ ॥ उदक रसमां घृत हुं जाण, यादवमध्ये कृष्ण प्रमाण पांडवमां हुं धनंजय जेह, व्यासमुनी स-

घळामां तेह ॥ १६ ॥ कविमां शुक्राचार्यज जेह, यमदंड दे तेमां जाणज्यो तेह; उपायमां धनवंतरी जाण. गोपमांहे तुं नंद प्रमाण ॥ १७ ॥ औषधिमां जवरूपे जाण, धातुमांहे हेम प्रमाण; पतिवृता नारी ते हुंय, तृणमां दर्भ जाणी ले तुंय ॥ १८ ॥ अर्जुन विभुति अंतज नथी, तुजने कंइकंइ कह्युं में कथी; को वस्तु मुज विण खाली नथी, सर्वमां व्यापक छुं सर्वथी ॥ १९ ॥ योगशास्त्रने ब्रह्मविद्याय, विभुति योग दशमो अध्याय ॥ २० ॥ इति श्रीभगवद्गीतासूपनीषद्सु० योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन संवादे विभुति योगो नाम दशमोध्यायः ॥ १० ॥

॥ दुहो ॥ स्वामी त्हारा वचनथी, मोह गयो महराज; दया करी हुं दासने; धन धन कृष्णजी आज ॥ १ ॥ ॥ चोपाइ ॥ अर्जुन कहे प्रभु पालो लाड, कृपा करी विश्वरूप देखाव; जोवा इच्छा छे मुज घणी, आशापुरो सेवक तणी॥ १॥ जो तुं जाणे में सहेवाय, दीठा पछी द्रष्टे जोवाय; हे अर्जुन एम कहे भगवान, देवचक्षु तने आपुं जाण ॥ २ ॥ म्हारां अनंत रुप छे जेह, देव द्दष्टी करी निरखे तेह; मारे विषे आदित वसू जेह, अश्वनीकुमार रुद्र वली तेह ॥ ३ ॥ जे ते कोये दीठा नहि, ते म्हारामां जो स्थीर रही; संजय धृतराष्ट्रने कहे, अर्जुन देवचक्षुने

ग्रहे ॥ ४ ॥ आपी नेत्रमे• देखाडयुं रूप,ते केवुंछे अकल स्वरूप; अनेक संख्यानो नहि पार, अनेक नेत्र के अनेक विचार ॥ ५ ॥ अनेक हस्तने अनेक शिश, अ-नेक माया रची जगदीश; अनेक भुषणने आयुध वळी, अनेक धनुषने बाणावळी ॥ ६ ॥ अनेक पुष्प सुगंध अनेक, अति आश्चर्यंज वाध्युं विवेक;मध्य विकास दीठा शशीने भाण, सहस्र सूर्यनुं तेज प्रमाण ॥ ७ ॥ परमेश्वरंना शरीर मांह्य, कोटी ब्रह्मांड दीठांछे त्यांह्य; देखीने त्यां विस्मय थयो, गदगद कंठ थई बोलियो ॥ ८ ॥ अर्जुन कहे स्वामी ए धार, समस्त (देव) दीठा तेणीवार; म्हारा देह विषे देवेश

प्राणी मात्र करे आवेश ॥९॥ शिव ब्रह्मा दीठा तेणीवार, सर्व ऋषि दीठा निर-धार; किंनर यक्ष ने राक्षस तेह, गांधर्व सकल देखुंछुं जेह ॥ १० ॥ दैत दानव देखुंछुं वली, पांडव सेन्या टोले मली; द्रो-णाचार्य भीस्मादिक जेह, प्राणी मात्रने देखुंछुं तेह ॥ ११ ॥ अर्जुन कहे स्वामी विनति, आद्य अंत हुं देखतो नथी; मध्य भाग स्वरुपनी जेह, अर्जुन कहे नथी देखतो तेह ॥१२॥ चंद्र सूर्य ए नेत्रने ठाम, अकल स्वरुप दीठुं ए धाम; अनेक देव दानवने ऋषि, अनेक ब्रह्मा शिव करेछे स्तुति ॥ १३ ॥ स्वामी स्वरुप घणुं वि-काळ, जोवा योग्य नहि हुं बाळ; स्वामी

रूप घणुं भयकरी, विश्वरूप शुं देखुं (छुं) हरि ॥ १४ ॥ धृतराष्ट्रना पुत्रो जेह, त्हारा विषे देखुंछुं तेह; भीष्मदेव बीजा राजंन, सो कौरवने दुर्योधंन ॥ १५ ॥ शल्य करणने बीजा राय, ते त्हारा मुख मां देखाय; वळी आपणा योद्धा जेह, सर्व मुखमां पडिया तेह ॥ १६ ॥ स्वामी एहमां ए देखीए, सर्व नाश पाम्युं पेखीए; केटलाक तो डाढमां रह्या, तेमना प्राण दीसेछे गया ॥ १७ ॥ अनेक मस्तक विना देखुंछुं जेह, सर्वे प्राण तज्या छे देह; ज्यम नदी निर सागर मां जाय, त्यम तुज मुखमां प्रवेश थाय ॥ १८ ॥ जेम पतंग दिपकमां बळे, तेम

त्हारा मुखमां आवी मले; अर्जुन कहे सांभळो जुगदीश, तुं दुष्ट संहारण वाधो इश ॥ १९ ॥ धन धन स्वामी आ अवतार, अर्जुन दास करे नमस्कार; करजोडीने लागुं पाय, स्वामी मेंतो सह्युं नव जाय ॥ २० ॥ तुजमां बाधुं जगत श्रीहरि, ए वात म्हारा मनमां ठरी; स्वामी म्हारो मोहज गयो, तम प्रसादे पावन थयो ॥ २१ ॥ जेवी आज्ञा करो प्रभु आज, निश्चे म्हारे करवुं काज ॥ २२ ॥

॥ दुहो ॥ (काले) अर्जुन ए भक्षज कर्या, तुं निमत मात्र करी जाण; पूर्वे ए में मारिया, सहजे लीधा प्राण ॥ २३ ॥

॥ चोपाइ ॥ बेउ सेन्याना योद्धा जेह

प्राण विनानां खोखां• एह ॥ २४ ॥ अ-
र्जुन काल व्यापोछे सही, वण मार्या पण
जीवे नहि ॥ २५ ॥ ते माटे तुं जय पा-
मीश, शत्रु जित भयने वामीश, राजधर्म
ए जाणो सही, ए में पुर्वे मार्या सही
॥ २६ ॥ ॥ दुहा ॥ संजय धृतराष्ट्र-
ने कहे, अर्जुन पाम्यो त्रास; गदगद
कंठ हवो थको, हरि चरण करे निवास
॥ २७ ॥ वचन सुणी जुगदीशनां, लाग्यो
हरिने पाय; अनंत रुप दीठां हवे, स्वामी
रह्युं न जाय ॥ २८ ॥ ॥ चोपाइ ॥
करजोडीने करुं प्रणाम, हुं सेवक तुं
म्हारो श्याम;अनंत रुप हो देव देवेश,अकल
ब्रह्मने करुं आदेश ॥ २९ ॥ प्रभु तमो अ-

वनी (तळ) आकाश, सर्व भूतमां त्हारो वास; पुराण पुरुष तुं आदे जेह, म्हारो सखा में जाण्यो तेह ॥ ३० ॥ में यादवने सारथी कह्यो, ते अपराध म्हारो तें सह्यो; एक आसन एक सज्या वळी, एक थाळमां जमता मळी ॥ ३१ ॥ तें अपराध सांख्यो मोरार, अर्जुन दास करे नमस्कार, ज्यम पिता पुत्रने लाडे लाड, हवे स्वामी शांत रुप देखाड ॥ ३२ ॥
॥ दुहो ॥ आश्चर्य दीठुं तुज विषे, भय पाम्यो हुं तेह; कृपा करो मुज दासने, शांत पमाडो एह ॥ ३३ ॥ ॥ चोपाइ ॥
अर्जुन तुजपर कृपा अपार, माटे आ लीला कीधी सार; कृपा करो मुंजने श्री

हरि, हुं मागुछुं एहज फरी ॥ ३४ ॥ वेद यज्ञ दान तिर्थ तपे, व्रत होमे नव पामे जपे; ए रुप जोवा को समर्थ नहि, तुज विना बीजो नव शके सही ॥ ३५ ॥ संजय धृतराष्ट्र प्रते ओचरे, विश्वरुप संकेरण करे; अर्जुन प्रते वाणी कही, व्रथा कष्ट तने थाशे नहि ॥ ३६ ॥ सोम रुप कीधुं तेणी वार, देवचक्षु लीधां मोरार; तें रहीत कामना भक्ति आचरी, हुं दीठो ते ज्ञाने करी ॥ ३७॥ जे वासना रहीत करम आचरे, माहारे विषे समर्पण करे; हे अर्जुन जे भक्त कहेवाय, दुष्ट संगथी अलगो थाय ॥ ३८ ॥ प्राणी मात्रने वल्लभ जेह, म्हारा भक्तनां लक्षण एह;

योगशास्त्रने ब्रह्मविद्याय, विश्वरुप एकादशमो अध्याय ॥ ३९ ॥ ॥ इति श्रीभगवद्गीता सूपनीषद् सु० श्रीकृष्णार्जुन संवादे विश्वरुपनाम एकादशमोऽध्यायः ॥११॥

॥ दुहो ॥ रामभक्त करजोडी कहे, सांभलो विश्वावास; (जेम) अर्जुन मोह छंडावियो; त्यम मुजने राखो पास ॥ १ ॥

चोपाई ॥ अर्जुन कहे सांभळो महाराज, तम प्रसादे सर्यां मुज काज; स्वामी ह्हारा भक्त कहेवाय, कोण लक्षणथी ते ओळखाय ॥ २ ॥ वलतुं वचन कहे भगवान; म्हारा भक्तने म्हारुं ध्यान; मुज विषे मन राखे आसक्त, एवा होय ते म्हारा भक्त ॥ ३ ॥ प्रेम प्रीत

श्रद्धाए करी, हृदय विकास (मानी) राखे श्रीहरि;सर्व इंद्रिनो निग्रह करे;सघले समान बुद्धि ए धरे ॥ ४ ॥ जे जे कर्म करतो थको, एकाग्र थइ मुजने अर्पतो; ते म्हारूं पद पामे सही, मोक्ष पामवा संशय नहि ॥ ५ ॥ स्वामी मननी चंचल गति, त्हारे विषे क्यम रहे स्थिर मति; अर्जुन मन चंचल कहेवाय, अभ्यास योगथी ते वश थाय ॥ ६ ॥ जो अभ्यास करी नव शके. तो कर्म समर्पे म्हारे विषे; सर्व कर्म मुजने अर्पशे, कर्म करतो ते छुटशे ॥ ॥ ७ ॥ जप तप तिर्थ योग ने याग, कर्म करे.पण फलनो त्याग; पारथ प्रति. कहे भगवान, अभ्यास योगथी उपजे

ज्ञान ॥ ८ ॥ ज्ञान योगथी ध्यान उपजे. ध्यान थकी कर्म फलने तजे; कर्म फल तजे मोक्ष पामीए, मोक्ष थकी भव भय वामीए ॥ ९ ॥ हे अर्जुन तुं जाणे तेह, म्हारा भक्तनां लक्षण एह; प्राणी मात्रनो द्वेश नव करे, कोमल प्रिय वचन ओचरे ॥ १० ॥ दया युक्त रहीत अहंकार, हुं मारुं नव करे लगार सुख दुख सरखुं जाणे जेह म्हारा भक्तनां लक्षण एह ॥ ११ ॥ सुख दुख मांह्य विनय संतोष, एणीपेरे पामे मोक्ष; आत्मा जीत (ते) कहेवो सही, म्हारे विषेथी अलगो नहि ॥ १२॥ कोने भय न उपजावे जेह, कोथी भय

नव पामे तेह; हरख शोके सरखो लेखवे आत्म ज्ञान अंतर अनुभवे॥१३॥राग द्वेश मद वरजित सही,आशा कोईनी इच्छे नहि पवित्र उदार विचिक्षण जेह,सुख दुख सरखुं जाणे तेह॥१४॥लाभ थकी मोह नहि उपजे, हाण थए सुखने नहि तजे; शुभ अशुभ सहजे त्याग, शत्रु मित्र जेने समभाग ॥ ॥ १५ ॥ मान अपमाने सुखीयो जेह, मारा भक्तनां लक्षण एह; सीत उष्ण जेहने समान, स्तुति निंदा वरजित अभिमान ॥ ॥ १६ ॥ द्रढ मतिए स्वधर्म आचरे, अधर्मथी मन अळगुं करे, नवधा भक्तिए मुजने ध्याय, मारा भजनथी संतोषाय ॥ १७ ॥ म्हारी भक्ति विना(मन)नव ठरे, मुजने आ-

त्म निवेदन करें, हिंसा सत्वादि वस्तु जेह, कुड कपटथी अळगो तेह ॥ १८ ॥ ब्रह्मचर्य अध्यन नीज कर्म, मारा भक्तना एवा धर्म; स्वदारा रुतु गामी जेह, ब्रह्मचर्य नर भणीए तेह ॥ १९ ॥ एवा भक्त कहावे जेह, मारा पदने पामे तेह; योगशास्त्रने ब्रह्मविद्याय, भक्त लक्षण द्वादशमो अध्याय ॥ २० ॥ इति श्रीभगवद्गीता सू० सु० श्रीकृष्णार्जुन संवादे विश्वरुप दर्शन योगो नाम द्वादसमो अध्यायः १२

॥ चोपाई ॥ अर्जुन कहे स्वामी अविधार, प्रकृती पुरुषनो कहो विचार. क्षेत्ररुप ते कोण कहेवाय, क्षेत्रज्ञने केम ओळखाय ॥ १ ॥ ज्ञान नाम कोण कहीए

जेह,. ज्ञान करी शुं जाणवुं तेह, (हे) अर्जुन एम कहे भगवान, क्षेत्र रुप शरीर ते जाण ॥ २ ॥ शरीरनो धरताछे जेह क्षेत्र ज्ञानी कहीए सुण तेह, शरीर आत्मानो विचार, ए त्यां ज्ञानज कहीए सार ॥३॥ इच्छा द्वेष सुख दुखछे जेह, ए विकार शरीरना तेह; हे अर्जुन एम कहे भगवान गुरु सेवाए लहीए ज्ञान ॥ ४ ॥ हिंसा वरजित नर होय जेह, क्षमा आर्जव कहीए तेह; बाह्याभ्यंतर शुद्ध वैराग, आत्म जित इंद्रिनो त्याग ॥ ५ ॥ पुत्र कलत्र ने गृह व्यपार, अशक्त मनने नहि लगार; संसार भोग ते विख समान, अर्जुन ए त्यां कहीए ज्ञान ॥ ६ ॥ गुह्य कहुं ते सां-

भळ वात, आद्य श्रेहने मातने तात; इंद्रि वरजित निरगुण जेह, सघळे व्यापक कहीए तेह ॥ ७ ॥ सरव भूतमां सघळे वास, बाह्य भितरमां रह्यो प्रकाश;सर्वगुण-नो भोक्ताछे जेह, दुर समीपे रहेछे तेह ॥ ॥ ८ ॥ ए त्यां ज्ञान कह्युंछे सार, ज्ञाने गुण त्यागे निरधार; त्रिगुणना विषयछे जेह, अम्रत सरखा जाणे तेह ॥ ९ ॥ जिव तणा गुण कहीए जेह, एनो विचार कहुंछुं तेह; प्रकृतीने संजोगे रही, प्रकृतिना गुण भोगवे सही ॥ १० ॥ संजोग माटे गुण कहेवाय, वस्तु गत ते नव लेपाय; स्फटिक मणिना गुण कहेवाय, जेवा साथे तेवा थाय ॥ ११ ॥

हे अर्जुन तुं जाणे मर्म, करता हरता पोते ब्रह्म; जिवात्मा परमात्मा जेह; वस्तु गत त्यां एकज तेह ॥ १२ ॥ एवुं ज्ञान त्यां आवे नहि, त्यां लगी पशुवत् जाणो सही; सरव कर्म ते प्रकृति भेद, आत्मा अळगो अभेद अछेद ॥ १३ ॥ प्रकृतिने आश्रीने जेह, प्रेरी कर्म करावे तेह; पंड ब्रह्मांड वाप्योछे सही, वस्तुगत कंइ बंधन नहि ॥ १४ ॥ ज्यम आकाश निरंतर वास, सघळे दिनकर करे प्रकाश; त्यम आत्मा व्यापिक करी जाण, जरा मृत्यु नहि लाभ के हाण ॥ १५ ॥ ते नर ज्ञानी कहीए वेद, प्रकृति पुरुषनो जाणे भेद; प्रकृति मायानो विस्तार, आत्मा अळगो

रहित विकार ॥ १६ ॥ एम करी नर जाणे जेह, माया रहित जाणजो तेह, योगशास्त्रने ब्रह्मविद्याय, प्रकृति योग-तेरमो अध्याय ॥ १७ ॥ इति श्रीभगवद्गीता सूपनीषद्सु० श्रीकृष्णा० संवादे प्रकृतियोगो नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥

॥ चोपाइ ॥ अर्जुनने एम कहे भगवान, प्रकृति पुरुषनुं कहुं छुं ज्ञान; जे छे सघळाथी उत्तम, सर्व ज्ञान जाण्यानो मर्म ॥ १ ॥ प्रकृति त्यां त्रीगुण कहेवाय जेणे योगे देह बंधाय; त्रीगुणना त्रीविध प्रकार, तेनो प्रथक् कहुं विस्तार ॥ २ ॥ सत्व गुणे ते सुख संतोष, रजो गुणे होय त्रष्णा शोक; मोह निद्रा ने आ-

ळस जेह, तमोगुणे बंधायो देह ॥ ३ ॥
सत्वगुणं जे देह बंधाय, काळादिकनो
स्पर्श न थाय; सत्वगुणे ज्ञान उपजे, ज्ञा-
नथकी ते मुजने भजे ॥ ४ ॥ रजोगुणथी
लोभ उपजे, लोभथकी हरि सेवा तजे;
तमोगुणे उपजे अज्ञान, अज्ञान ए तो नर्क
समान ॥ ५ ॥ उत्तम मध्यम अधोगति
जेह, त्रीगुणनां कारण छे तेह; त्रीगुणातित
हवा जे जन, जन्म मरण रहित पावन ॥
॥ ६ ॥ अर्जुन कहे त्रीभुवन राय, त्री-
गुणातित ते कयम ओळखाय; अर्जुन
एवे ज्ञाने करी, सघळे व्यापक देखे हरि
॥ ७ ॥ हर्ष शोक छे तेने समान, सुवर्ण
लोह काष्ट पाषाण; स्तुति निंदा के माना-

पमान, शत्रु मित्र ए बेहु समान ॥ ८ ॥
सर्वारंभे फळने तजे, निश्चळ मनथी
मुजने भजे; ते तो त्रिगुणातित कहेवाय,
ब्रह्मभूत थइ मुजने चहाय ॥ ९ ॥ निं-
र्गुण भक्तमां म्हारो वास, सदा मा-
याथी रहे उदास; योगशास्त्रने ब्रह्मविद्याय,
गुण वर्णन चतुर्दशो अध्याय ॥ १० ॥
इति श्रीभगवद्गीता सू० सु० श्रीकृष्णार्जु-
नसंवादे गुणत्रयविभागयोगो नाम चतु-
र्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

॥ चोपाइ ॥ अनंत कृपा अर्जुनपर
करी, संसारनुं रुप कहे श्रीहरि; अश्वत्थ
नाम वृक्ष विशाळ, उचां मूळने नीचां डाळ
॥ १ ॥ श्रीधर तेनो करे विस्तार, एक

देह बीजो संसार; संसार वृक्ष ते देह प्र-
माण, मस्तक मूळ पद डाळ निर्वाण ॥
॥ २ ॥ मूळ सिंचे शाखा पुष्ट थाय, मुख
सिंचे इंद्रिय पोषाय; वपु वृक्ष तो (जोतां)
वणसी जाय, माटे अश्वत्थ वृक्ष कहेवाय ॥
॥ ३ ॥ देह वृक्ष वर्णवुं अर्जुन, संसार
वृक्षनुं करुं वर्णन; विपरित गत अवळो सं-
सार, चोवीस तत्त्व शाखा विस्तार ॥४॥
परिब्रह्म मूल ते उंचु रह्युं, संसार मूळ ते जे
थकी थयुं; दस इंद्रि पंचभूत अहंकार, मह
तत्व माया (बहु) विस्तार ॥ ५ ॥ निगम
पत्र कहीए नव खरे, युग्म फळ उपजे नि-
स्तरे; ए वृक्षनी गति जाणे जेह, वेदवेत्ता
पुरुष छे तेह ॥ ६ ॥ वळी ते वृक्षने वर्णवे

हरि, बीज मूळे महि बहु विस्तरी; राग द्वेष मद मोह अहंकार, कर्म मूळनो बहु विस्तार ॥ ७॥ देह वृक्ष (थयो) नीचां मूळ वडे, वारंवार उपजे ने पडे; कर्म ज्ञान शाखा द्रुम तणी, त्रिगुण पुष्पनी शोभा घणी ॥ ८ ॥ ए द्रुमनुं दरशन नव थाय, संसार वृक्ष छेद्यो नव जाय; नव जणाय आद्य मध्य ने अंत, संसार वृक्ष मोटुं अत्यंत ॥ ॥ ९ ॥ वृक्ष छेदवा तणो उपाय, कहुं विस्तारी अर्जुन राय; तजवां गृह धन सुत सुंदरी, असंग लक्षण आयुध धरी ॥ १०॥ बीजुं ज्ञान खडग जातकार, त्रीजो विवेक रूपी ले कुठार; त्रण आयुधनो कीजे प्रहार, तो छेदाय मूळ सहित सं-

सार ॥ ११ ॥ संसार वृक्ष समूळो गयो, मुक्ति पामवा योग्य ते थयो; जननी जठर ते पामे नहि, मम चरणे जेने बुध थइ ॥ १२ ॥ जीत्यो मोह संसार परहर्यो, आत्मस्वरुप जोवा भाव कर्यो; ते जीवने सुख दुख निवर्ति वृथा, ते ज्ञानी मुज पद पामे सर्वथा॥१३॥ एक छे विष्णु धाम मुज तणुं, पर थकी पर वेगळुं छे घणुं; सर्व प्रकाश तेजोमय रवि, सर्व कळा चंद्र पावक हवी ॥ १४ ॥ संसार मांह्य तेज एनुं सर्वथी, मारा धामने (एज) पोहोचतुं नथी; (हवे) रवि चंद्र प्रकाश ते हुंय, (तो) मुजने अज़वाळुं करे ते हुंय ॥ १५॥ न पहोचे गातां वाणी गुण ग्राम, अर्जुन ते

म्हारुं धाम; ते धाम गयो (ते) नव आवे-
फरी, अर्जुनने आ शंका कहे छे हरि ॥
॥ १६ ॥ पारथ मुजने पुछे (छे) तुंय, धाम
गयो नव फरे ते शुंय; ब्रह्मलोक गयो ते
(पाछो)पडे,म्हारा भक्तने काल नव अडे।१७
मृत्यु (लोकना) जीव मायाथी थाय, म्हा-
रो अंश मूकुं ते मांय; वायुथी परपोटा
जेम, हुं मायाथी (विश्व) उपजे तेम॥१८॥
जगत विषे ब्रह्म व्यापी रह्यो, सूर्य बिंब
जलमां जेम थयो; जल सूके नव सूके
भाण, एम विश्वथी अलगो भगवान॥१९॥
घट मठ महद त्रण आकाश, एकनां त्रण
स्वरुप प्रकाश, महद मांह्य घट मठ
समाय, त्यम सर्व जीव मुज मॅले

थाय ॥ २० ॥ लिंग शरीरनो भंग जो करे, ते म्हारा (लोक) विषे संचरे; उपजे वणसे त्रण ब्रह्मांड, म्हारुं धाम अभंग अखंड ॥ २१ ॥ (आ) शरीरनो नाश ज्यारे थाय, जीव मन इंद्रिने लेतो जाय. जइ (बीजा) शरीरमां पुरे वास,(लइ)एकादशने राखे पास ॥ २२ ॥ ज्यम पुष्प वास (ना) लइ जाय पवन, तेम जीव साथे (कर्म) इंद्रि अर्जुन; न टले निमित्त (ते) पांडु कुमार, निमित्तनो कहुं छुं विस्तार ॥ ॥ २३ ॥ शब्द स्पर्श रस रुपने गंध, ए पांच जीवने कर्म संबंध; छट्ठुं मन जीव साथे जाय, जेम शरीर पुठे छाया धाय ॥ २४ ॥ संदेह अर्जुनने थयो मन मांह्य,

प्रगट आत्मा व दीसे (ते) क्यांय; देह इं-
द्रिथी अलगो कहेवाय, तो शामाटे प्रगट
(नव) जणाय ॥२५॥ शीतोष्ण सुख दुख
पुन्यने पाप, द्वंद्व जन्म जरा संताप; अंत-
र मॅल अविद्या ग्रही, माटे आत्माने देखे
नहि ॥ २६ ॥ म्हारी कृपा विण अर्थ
न सरे, ज्ञानी आत्मानुं दर्शन करे; पु-
न्यवान विवेकी सत्य स्वरूप, एवा साधु
(देखे) आत्मानुं रुप ॥ २७ ॥ नहि तिर्थ
अवनीपर खडे, करे व्रत हिमाले चडे; थइ
योगी वनमां रडवडे,तो पण जीवनुं स्वरूप
न जडे ॥ २८ ॥ जे सम दार्शी (सहुने)
हितकारी, सदाकाल भक्ति (करे) मारी; ते
पामे आत्मानुं दर्शन, एम कहेछे जुगजी

वन ॥ २९ ॥ सर्वेश्वर प्रभु देहनो पति, अविद्या आधीन थयो सर्वथी; छे आत्मा अनंत समर्थवान, मायासंगे थयो दीन समान ॥३०॥ म्हारुं स्वरूप तने कहुं अर्जुन, एतो जीवनुं कर्युं वर्णन; सुर्य चंद्रमा दिव्य हुताश, आजे तेज में कर्युं प्रकाश ॥ ३१ ॥ ए त्रण नेत्र म्हारां अर्जुन, शशी किरणे (सुधा)वरसुं परजन्य;रवि किरणे सोषु निरधार, ए म्हारो में कह्यो विस्तार ॥ ३२ ॥ पृथ्वीमांह्य धीरज (क्षमा) बल घणुं, ते बल अर्जुन छे मुज तणुं; द्रुम गिरि प्रजानो धरे छे भार छे वसुधाने म्हारो आधार ॥ ३३ ॥ सिंचु औषधि चंद्ररूप थइ,(वली सर्वने) तृप्त करूं अंतरमां

रहो; ए मनुष्य मुंजने जाणे शुं, उदरमांह्य जठराग्नी हुं ॥३४ ॥ देह मध्ये जठराग्नी जीवन, चतुर्विधि अन्न ते भोजन; हुं पाचक छुं पांडव भूप, पांच प्राणवायु म्हारुं रुप ॥ ३५ ॥ प्राण अपान वानने उदान, पांचमो वायु नाम समान; जीवन सुख आपुं देहमां रही, ए मनुष मुजने जाणे नहि ॥ २६ ॥ सहुने विषे रहुं छुं जेम, काष्टमांह्य हुताशन तेम; धर्म (कर्म) विषे जेनुं अंतःकर्ण, त्हेने समर्थ ज्ञान (करुं) अर्पण ॥ ३७॥ वेदनो करता वेदनो हार्द, हुं कविता वांणीछे शारद; ए च्यार श्लोक संक्षेपे करी, गुप्त विभुति कहेछे हरि ॥३८॥ बे विधिना पुरुष (छे) अर्जुन

एकाक्षर बीजो अक्षर पावन; (जे) क्लेशनुं भोजन शेवे काम,न पामे ते (अक्षय)ब्रह्मनु नाम ॥ ३९ ॥ सच्चीदानंद ते सुखनुं धाम, कालातित ते अक्षर नाम; क्षर अक्षर अ- क्षरातित जेह, समजी अर्जुन करजो तेह ॥ ४० ॥ उत्तम पुरुष अक्षरातित हरि, निष्कर्म भोग मूक्या परहरि; व्यापक न्यारो जाणी करी, अंतर नेत्रे जो जो फरी ॥ ४१ ॥ ते परमात्मा रुप धरी रह्यो, त्हेनो महिमा नव जाये कह्यो; श्रीकृष्ण वचन वदे माधुर्य, ए परमा- त्मानुं कहुं आश्चर्य ॥ ४२ ॥ माया बीज संसारजतणुं, तेथी पुरुषोत्तम वेगळो गणुं; नवधा भक्ति करे जे भक्त, ते पुरुषोत्तम

चरणे (रहे) आसक्त ॥ ४३ ॥ सर्व समर्पण मुजने थाय, पुरुषोत्तम सरखो ते थाय; सर्व व्यापक पुरुषोत्तम जाण, ते ब्रह्मरुप हृदेमां आण ॥ ४४ ॥ हे भारथ कुलदिपक पार्थ, ए पुरुषोत्तम पामवानो अर्थ; में माहरुं गुप्त कह्युं छे आप, रखे विसरतो अर्जुन बाप ॥ ४५ ॥ ए रस सांभलवातणो महिमाय, मूढ सांभळतां ज्ञानी थाय; जेम सजीवनविद्या मळे, जन्म मरणनो फेरो टळे ॥ ४६ ॥ सांभळी अर्जुन लाग्यो पाय, थयो पुरण पंदरमो अध्याय; पुरुषोत्तम योग अध्यायनुं नाम, जीव्हा एकने बहु गुण ग्राम ॥ ४७ ॥ गातां गुण पामुं नहि पार, में संक्षेपे कह्यो

विस्तार; योगशास्त्रने ब्रह्मविद्याय, पुरुषोत्तम नाम पंचदशो अध्याय ॥ ४८ ॥
इति श्रीमद्भगवद्गीता सूपनीषद् सु० श्रीकृष्णार्जुनसंवादे पुरुषोत्तम योगो नाम पंचदशो अध्यायः ॥ १५ ॥

॥ दुहो ॥ बेहु प्रकृति सर्वने, अर्जुन एवुं ज्ञान; एक दैवी एक आसुरी, अर्धो अर्ध नाशान॥ १॥ चोपाई॥ दैवीतणो सांभल महिमाय, प्राणी मात्र ते निरभय थाय; जप तप यजन अहिंसा तेह, दया दानने शम दम जेह ॥ २ ॥ शांत समो गुणने आनंद, अविचल मन विषे गोविंद; लोभ ने विनय कोमलता मन, क्षमा धिरज बुद्धि पावन ॥ ३ ॥ दैवी प्रकीर्ति कहीए आण, एह जाणवां लक्षण प्रमाण; दैवी

प्रकृति मोक्ष उपाय, जेणे श्रीहरि संतोषाय ॥ ४ ॥ मोह मच्छर माया अज्ञान, गर्व क्रोधने लोभ अभिमान; आसुरी प्रकृतिना (गुण) एह, अवश्य नर्क पमाडे तेह ॥५ ॥ हे अर्जुन एवा नर जेह, कहीए मोक्ष न पामे तेह; एक तृष्णा पास बंधाय, काम क्रोध दोरे संधाय ॥६॥ अधर्म करी द्रव्य संचय करे, हुं म्हारुं एवुं मन धरे; हुं समर्थ हुं भोगी सुखी, हुं करता कुटुंबी मुखी ॥ ७ ॥ हुं बलिओ में मार्यो एह, हुं सरखो नहि बलियो तेह, हुं भोगी हुं दानेश्वरी, लक्ष्मीने मद दंभे करी ॥ ८ ॥ अहंकार बल कामने क्रोध, तेने आशय करे विरोध; म्हारा भक्तनो द्वेषज करे,

याग दाननो मद मन धरे ॥ ९ ॥ कुंभी पाक पडे नर तेह, हुं करता मन जाणे जेह; एवा दुष्ट अहंकारी घणा, ते अधिकारी कुंभी तणा ॥ १० ॥ असुर योनीमां ते अवतरे, ज्यां त्यां म्हारो द्वेषज करे; विहित मार्गे मुजने नहि धाय, तेवा दुष्ट अधोगति जाय ॥ ११ ॥ अर्जुन नर्क तणां त्रण द्वार, काम क्रोधने लोभ अपार, तामस गुणथी उपन्या जेह, (त्रण) द्वार नर्कनां कहीए तेह ॥ १२ ॥ तेह तजीने मुजने धाय, काम क्रोधथी अलगो थाय; ते म्हारुं पद पामे सही, आपुं मोक्ष त्यां संशय नहि ॥ १३ ॥ ते माटे अर्जुन कह्यो मर्म, तुं हित कामना करजे कर्म;

दैवी आसूरी मति कहेवाय, माटे निर्गुण म्होटो महिमाय ॥ १४ ॥ निर्गुण भक्त कांइ वांछे नहि, ते (माटे) म्हारुं पद पामे सही; योगशास्त्रने ब्रह्मविद्याय, दैवी आसुरी सोडषो अध्यायः ॥ १५ ॥ इति श्रीमद्भगवद्गीता सूपनीषद् सु० श्रीकृष्णार्जुन संवादे दैवासुरसंपद्विभाग योगो नाम सोडषो अध्यायः ॥ १६ ॥

॥ चोपाइ ॥ ॥ अर्जुन उवाच ॥ जो जन शास्त्र मार्गने तजे, अश्रद्धाए तुजने भजे; तेनी कोण गति हे श्याम; अर्जुन पुछे आत्माराम ॥ १ ॥ हे अर्जुन एम कहे भगवान् , जेवी श्रद्धा तेवी गति जाण; त्रण प्रकारनी श्रद्धा असी, सात्विक

राजस ने तामसी ॥ २ ॥ सात्विक त्यां सूरपतिने भजे, राजस यक्ष राक्षसने यजे; तामसी भूत प्रेत वैताल, उपासे भैरव भूताल ॥ ३ ॥ आशाबंध घोर तप करे, देह दमे ने फोगट मरे; अहार पण त्रीविधि प्रकार, सात्विकनो ते उत्तम सार ॥ ४ ॥ कोमल अल्प मनोहर जेह, खाटुं तिखुं वरजित तेह; आयुष सत्व बलने आरोग, म्हारी भक्तिनो करे संजोग॥५॥ एटला अर्थ वर्धारे जेह, सात्विक भोजननुं फल एह; खाटुं तिक्षण अमलने खार, ए त्यां राजस कहीए अहार ॥ ६ ॥कष्ट रोग उपजावे तेह, राजस भोजननुं फल एह; वासी निर उचिष्ट जे अन्न, ए कहीए

तामस भोजंन ॥ ७ ॥ विष्णु भक्तथी वि-
मुख थाय, ए भोजननो ए महिमाय; दान
यज्ञ ए त्रिविधि प्रकार, सात्विक राजस ने
अहंकार ॥ ८ ॥ फल रहित श्रद्धाये जेह,
सात्विक दान कहीए तेह; स्वार्थ अर्थे
आपे दान, ते तो राजस निश्चे मान ॥९॥
अकाल अश्रद्धाए जेह, तामस दान क-
हीए तेह; बुद्धि भ्रष्ट उपजावे रोग, म्हा-
री भक्तिनो करे वियोग ॥ १० ॥ अधम
मध्यम उत्तम गति जेह, त्रिविध दान फल
कहीए तेह; जे शास्त्र मार्ग श्रद्धाए भजे,
तेने म्हारो संग उपजे ॥ ११ ॥ अश्रद्धाये
होमे जेह, जप तप कर्म कीधां तेह; तेतो
सौ निष्फल होय सही, जो श्रद्धा पूर्वक

कीधां नहि ॥ १२ ॥ गुण श्रंधा आवर्ण कहेवाय, माटे मारी प्राप्ती न थाय; श्रद्धा गुणे भजे नर जेह, म्हारा पदने पामे तेह ॥ १३ ॥ गुण सहित श्रधाए करी, अहर्निष मनमां राखे हरि; योगशास्त्रने ब्रह्म विद्याय, गुणश्रद्धा सप्तदशो अध्याय ॥ १४ ॥ इति श्रीमद्भगवद्गीता सूपनीषद्सु० श्रीकृष्णार्जुनसंवादेश्रद्धात्रय विभागयोगो नाम सप्तदशो अध्यायः ॥ १७ ॥

॥ चोपाइ ॥ अर्जुन कहे सांभळो भगवान, कहो सन्यासनुं तत्वज्ञान; त्याग तणो जे विधि विचार; तेह जाणवा मने इच्छा अपार ॥ १ ॥ काम कर्मनो करवो नाश, अर्जुन ते कहीए स-

न्यास; जप तप तिर्थ योगने याग,
फल तजे ते कहीए त्याग ॥ २ ॥ (वृद्ध)
अशक्य(थी)सन्यासी थाये जेह(जेवा)मृगला
वनमां (सदा) रहेछे एह; वस्त्र तजी जे योगी
थाय, नग्न पशु सरखा कहेवाय ॥ ३ ॥
विना भक्ति नर पशु सम जेह, एवा सन्या-
सी योगी तेह; जे मुज भक्तिनी कामना
नव करे, ते उदे अस्त रवि आयुष हरे ॥
॥ ४ ॥ एवा दुष्ट अवतरिया जेह, जननी
जोबन हरवा तेह; लोह करणनी धमण
जेम धमे, म्हारा भजन विना आयुष
निर्गमे ॥ ५ ॥ काग गर्धव ने वली श्वान,
म्हारी भक्ति विना ते (सरखां) जाण;
म्हारा गुण जे सांभळे नहि, तेना कर्ण

वृक्ष कोतर सही ॥ ६ ॥ म्हारा यश नव बोले वाण, ते जीव्हा डेडकनी जाण; म्हारा दासने नमे नहि जेह, मस्तक नहि तुंबी फल तेह ॥ ७ ॥ जे हस्ते म्हारुं अर्चन नहि, ते तरुवर शाखा जाणो सहि; जे नेत्र वडे म्हारुं दर्शन नव थाय, मोर पिच्छ ते नेत्र कहेवाय ॥ ८ ॥ जे हरि मंदिर चाली नव जाय, तेनो देह थावर कहेवाय; श्रीहरि कहे सांभळ अर्जुन, म्हारी भक्ति (महिमा) धरजे मंन ॥ ९ ॥ दुहो ॥ म्हारा दासनी चरण रज, अंग नव परसे जेह; ज्ञान रहित ते जाणवा, जिवता मूवा तेह ॥१० ॥ ॥ चोपाइ ॥ म्हारा गुणने सांभळी रोमां-

चित नव थाय, • तेनुं हृदय लोह सरखुं कहेवाय ॥ अर्जुन उवाच । स्वामी तमे कहुं निरधार, म्हारी भक्ति विण (न) रहे लगार ॥ ११ ॥ तो ते उदर पोषण क्यम करे, ग्रहस्थाश्रम (मांहे) शी रीते आचरे ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ हे अर्जुन म्हारी भक्ति (मन) धरे, देहने अर्थे उद्यम करे ॥१२॥यथा लाभ संतोषी रहे,विषय तणां-सुख मन नव ग्रहे; हे पार्थ एम कहे भगवान, सुख ते त्रीविधि प्रकारे जाण ॥ १३ ॥ ज्ञान अभ्यास म्हारे विषे मन, ते सुख सात्विक हे अर्जुन; इंद्रिना विषय छे जेह, अमृत सरखा जाणे तेह ॥ १४ ॥ ते सुख, तो राजस कहेवाय, परिणाम ते (विष)

सरखुं थाय; पर उपवाद सुखीयो जेह,
(वळी) आलस निंद्रा कहीये तेह ॥१५॥
दुष्ट सेवाये जे सुख थाय, ते सुख तो तामस
कहेवाय; बुद्धि ते पण त्रीविधि प्रकार,
तेहेना प्रथक् कहुं विस्तार ॥ १६ ॥ बंधन
मोक्ष ते थकी जणाय, ते बुद्धि सात्विक
कहेवाय; अधर्म मिथ्या बोले जेह, राजस
बुद्धि कहीये तेह ॥ १७ ॥ राग द्वेष काम
क्रोध अपार, ते बुद्धि तामस अधिकार;
हवे कहुं च्यार वर्णना धर्म, ब्राह्मण क्षत्री
वैश्यादि (शुद्र) नां कर्म ॥१८॥ शम दम
शौच ने तप जेह, क्षमावान संतोषी तेह;
ज्ञान विज्ञान जप होमने धर्म, एह विधे
ब्राह्मणनां कर्म ॥१९॥ रण धिरज लज्या

वली जेह, स्थीरता दान द्विज भक्ति तेह;
यज्ञ याग जप तप विधि कर्म, ए छे
क्षत्री केरो धर्म ॥ २० ॥ पशु पाळे ने व-
णजज करे, कृषि दान वृत्त आचरे; वृत्त ति-
र्थ पाले स्वधर्म, ए छे वैश्यो केरां कर्म
॥ २१ ॥ द्वीज सेवा जे करे अपार, स्नान
दानने शुद्ध आचार; त्रणे वर्णनी सेवा
ब्रह्म, एतो शूद्रो केरां कर्म ॥ २२ ॥
कर्म धर्म (पोताना) न पाले जेह, म्हारा प-
दने पामे तेह; अर्जुन कहे सांभळो भग-
वान, तमारूं वचन (हवे) करुं प्रमाण ॥२३॥
प्रभु आप कहो छो ते सही, तम्हारी
आज्ञा लोपुं नहि; संजय कहे (छे) सांभळ रा-
जंन, कृष्ण कहे ते करे अर्जुन ॥२४॥ अ-

र्जुन श्रीहरि केरो वाद, तेंह सांभळो व्यास प्रसाद; साक्षात श्रीभगवंत प्रभु जेह, योग कह्यो अर्जुनने तेह ।।२५।। पूरण ब्रह्म श्रीकृष्णज सही, धनुर्धारी अर्जुन छे तहीं; राजाधर्म मुर्तिछे ज्यांय, संजय कहे जय होशे त्यांय ।। २६ ।। आ योग शास्त्र नर नारी गाय, तेनां ब्रह्महत्यादिक (पातक) जाय; एक अक्षर सांभळे जेह, विष्णुलोक पद पामे तेह ।। २७ ।। निष्काम माटे फल शुं लखुं, एक जिव्हाये (फल) शुं कही (नव) शकुं; मोक्ष पदार्थनुं ए ज्ञान, अर्जुन प्रते कह्युं भगवान ।। २८ ।। रामभक्त कहे कहो श्रीहरि, रहित कामना स्तुति करी; वेदांत मत गीतानुं ज्ञान, ते उपर कीधुं

आख्यान ॥ २९ ॥ श्री गुरुनी कृपाए करी, अमृत हरिरस मुक्यो भरी; ज्ञान पात्र करी पीशे जेह, मुक्तिरुप भणी नर तेह ॥ ३० ॥ संवत सोल साठोतरे आसो मास पक्ष उज्वरे; दिन तिथि द्वादशीने रविवार, कथा थइ पूरण विस्तार ॥ ३१ ॥ योगशास्त्रने ब्रह्मविद्याय, सन्यासयोग अष्टादशमो अध्याय ॥ ३२॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिशद्सु० श्री कृष्णार्जुनसंवादे अष्टादशमोऽध्याय:॥१८॥

॥ दुहो ॥ श्रीगुरु देव कृपा वडे में कीधुं आख्यान; अध्या अष्टादश थया, केवल ब्रह्मज्ञान ॥ १ ॥ वली मर्म सन्या-

सनो, वर्णाश्रमना धर्म; ज्ञान विचारी लीजिए, निवृते मन मर्म ॥ २ ॥ सांख्य योग सुधो कह्यो, कर्म मांह्य निष्कर्म; ब्रह्म विद्या अभ्यासीए, जाणवा हरि पद पर्म ॥ ३ ॥ योगशास्त्र ए बोलिया, कृष्ण अर्जुन संवाद: उपनिषदनो अर्थछे; सूणतां मन अल्हाद ॥ ४ ॥ प्रथम अध्याए पुछीयुं, संजयने धृतराष्ट्र; बीजे ज्ञान प्रकाशियुं, (अर्जुन) मोह छंडावा माट ॥ ५ ॥ त्रीजे कर्म प्रसंशा कही, माया केरी जाल; चोथे कर्मयोग वर्णव्यो, मुखे श्रीगोपाल ॥६॥ पांचमे कर्मनो नाश कह्यो, अर्जुनने ते वार; छठे योग प्रशंसियो, वेद कर्म ते सार ॥ ७ ॥ सातमे ज्ञान प्रशंसो

कही, आणि अंतरे हेत; अष्टांगयोग ते आठमे, कह्यो ज्ञान ऋषिकेत ॥ ८ ॥ नवमो अध्या नेहशुं, राजवण कह्यो सोय; अर्जुनने प्रति बोधियो, छोडावाने मोह ॥९॥ अध्या दशमे विभूति कही, एकादशमे विश्वरूप: द्वादशमे भक्त लक्षण कह्यां, तेरमे प्रकृति पुरुष ॥१०॥ चौदमे त्रीगुण वर्णव्या, पंदरमे पुरुषोत्तम योग; सोलमे प्रभु कृपा करी, कह्यो संपत्तियोग ॥ ११ ॥ गुण वर्णन दस सातमे, अर्जुन प्रते अविनाश; अढारमे वेगे कह्यो, फरी योगसन्यास ॥ ॥ १२ ॥ ज्ञानगोप ते प्रकाशियुं, संसार तरवा नाथ; पार्थ मोह छोडावियो, गांडिव धराव्युं हाथ ॥ १३ ॥ पापी प्राण मु-

काविया, भूमिनो उतार्यों भार; देवता पुष्प वृष्टी करे, योगणी पामी हार ॥ १४ ॥ रामभक्त कहे सांभलो, श्रोता धरी मन काय, श्रीगीताआख्याननो (पुरण थयो, । अढारमो अध्याय ॥ १५ ॥ ॥ इति श्री-भगवद्गीतासूपनीषद्सु० श्रीकृष्णार्जुनसंवादे अष्टादश अध्यायसार निरुपणं नाम अष्टादशो अध्यायः ॥ १८ ॥ ॥

॥ श्रीकृष्ण ॥ श्रीरामोजयति ॥ श्रीकृष्ण ॥

श्रीरस्तु ॥ श्रीकल्याणमस्तु ॥

Printed by V. V. Pathak at Jagadishwar Press
Girgaon Gaiwadi House No 2 Bombay.
and Publisle l l y Ashabhai Lakhubhai Biliya
Opposite.—Ang'o e:n ular School
Post No 11 Bombay.